सात तत्त्व और कर्म सिद्धान्त –3

डॉ. पारसमल अग्रवाल

Dr. Paras Mal Agrawal

Visiting Professor and Research Prof. (Retd.)

Oklahoma State University

Stillwater OK 74078 USA, and

Professor of Physics (Retd.)

Vikram University, Ujjain MP INDIA

प्रकृति बंध

8 प्रकृति या 8 प्रकार के कर्म या अष्ट कर्म

आद्योज्ञानदर्शनावरणवेदनीयमोहनीयायुर्नामगोत्रान्तरायाः।(तत्त्वार्थसूत्र 8.4)

(1) ज्ञानावरणीय कर्म – ज्ञान में आवरण का हेतु।
(2) दर्शनावरणीय कर्म –दर्शन में आवरण का हेतु
(3) वेदनीय कर्म – साता–असाता का हेतु
(4) मोहनीय कर्म – मोह का हेतु।

(5) आयु कर्म —नरक, तिर्यंच, मनुष्य एवं देव गति की आयु का हेतु

(6) नाम कर्म – शरीर एवं शरीर के अंग–उपांग का हेतु

(7) गोत्र कर्म – 'कुल' का हेतु

(8) अन्तराय कर्म – प्राप्ति में विध्न का हेतु

इन 8 में से ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, मोहनीय एवं अन्तराय धातिया कर्म हैं।

शेष 4 अधातिया कर्म कहलाते हैं।

* मोहनीय कर्म सभी कर्मों का राजा है। इसके क्षय होते ही तीनों शेष धातिया कर्म भी क्षय को प्राप्त होते हैं व अरहंत अवस्था प्राप्त होती है।

* गुणस्थान का निर्धारण मुख्यतया मोहनीय कर्म के आधार पर ही होता है।

* दो प्रकार के मोहनीय कर्म –

(1) दर्शन मोहनीय – आत्मा स्वयं को भूलकर अन्य में (शरीर, बुद्धि, यश, भक्ति, धन) अपनापन स्थापित करता है।

(2) चारित्र मोहनीय – अन्य पदार्थों से सुख–शान्ति प्राप्ति का प्रयास चारित्र मोहनीय के कारण से होता है।

Example

राष्ट्रपति भवन का उपयोग राष्ट्रपति करते हैं, नागरिकों द्वारा दी हुए टैक्स राशि द्वारा राष्ट्रपति भवन का रख–रखाव करवाते हैं – (चारित्र मोहनीय)

किन्तु यदि राष्ट्रपतिजी राष्ट्रपति भवन को अपना मान बैठे तो यह कहलायेगा – दर्शन मोहनीय

जीव शरीर की देखभाल, सुविधा, सुरक्षा की तरफ ध्यान लगाता है, समय देता है, शक्ति लगाता है – चारित्र मोहनीय

आत्मा शरीर को अपना मान ले – दर्शन मोहनीय

कर्म के **दस करण** के रूप में अध्ययन –

(1) बंध	(2) सत्ता
(3) उदय	(4) उदीरणा
(5) उत्कर्षण	(6) अपकर्षण
(7) संक्रमण	(8) उपशान्त
(9) निधत्ति	(10) निकाचित

(1) बन्ध –

प्रकृति स्थित्यनुभाग प्रदेशास्तद्विधयः (तत्त्वार्थसूत्र 8.3)

बंध के चार बिन्दु – (1) प्रकृति बंध (2) प्रदेश बंध
(3) स्थिति बंध (4) अनुभाग बंध

Analogy:

Financial institution में डिपाजिट

(1) प्रकृति: सेविंग खाता, एफ.डी., चालू खाता, शेयर

(2) प्रदेश: कितनी राशि

(3) स्थिति: कितने समय के लिये

(4) अनुभाग: प्राप्ति दर

(2) सत्ता –

पूर्व में बंधे हुए कर्मों में से कई फल देकर क्षय हो चुके होते हैं व कई आत्मा के साथ वर्तमान में भी सत्ता (मौजूद) में रहते हैं।

(3) उदय –

आबाधा काल पूरा होने के बाद बद्ध कर्म उदय में आना प्रारम्भ करते हैं। समस्त कर्म एक साथ उदय में नहीं आते हैं। जितना 'स्थिति काल' होता है उतने समय तक उदय में आते रहते हैं।

(4) उत्कर्षण –

सत्ता में पड़े हुए किसी कर्म की स्थिति एवं अनुभाग में वृद्धि का होना। उदाहरण – किसी शत्रु के प्रति कोई नयी जानकारी मिलने से शत्रुता की तीव्रता एवं स्थिति मे वृद्धि का होना।

(5) अपकर्षण –

सत्ता में पड़े हुए किसी कर्म की स्थिति एवं अनुभाग में कमी का होना।

(6) उदीरणा –

सत्ता में पड़े हुए किसी कर्म का अपकर्षण होकर वर्तमान में उदय में आकर खिर जाना

(7) संक्रमण –

सत्ता के किसी कर्म का एक रूप से दूसरे रूप में संक्रमण। इस संक्रमण में कर्म की प्रकृति नहीं बदलती है, उत्तर प्रकृति बदलती है। जैसे असाता वेदनीय का साता वेदनीय में बदल जाना। (यानि दुःखदायक का सुखदायक में बदल जाना)

(8) उपशान्त –

यह करण केवल मोहनीय कर्म के लिये ही संभव है। यदि सत्ता में कर्म है किन्तु वर्तमान में उदय नहीं है व उदीरणा भी उनकी संभव नहीं है तो कहा जाता है कि वे कर्म उपशम या उपशान्त अवस्था में हैं।

(Note: उपशान्त कर्म का उत्कर्षण, अपकर्षण, संक्रमण संभव है किन्तु उदीरणा संभव नहीं)

(9) निधत्ति –

सत्ता के जिन कर्मों का संक्रमण एवं उदीरणा तो न हो सकती हो किन्तु उत्कर्षण एवं अपकर्षण संभव हो, उन्हें निधत्ति कर्म कहा जाता है।

(10) निकाचित –

निकाचित कर्म वे हैं जिनका संक्रमण, उत्कर्षण, अपकर्षण एवं उदीरणा संभव न हो। बंधते समय जिस रूप में बंधे हैं उसी रूप में फल देकर ही निकाचित कर्म का खाता बंद होता है।

सात तत्त्वों में से चार तत्वों की चर्चा यहां करेंगे।
ये चार है :– आस्रव, बन्ध, संवर एवं निर्जरा।

आस्रव यानि कर्मों का आगमन या आस्रवण।

कायवाङ्मनः कर्म योगः। स आस्रवः। (तत्त्वार्थसूत्र 6.1, 6.2)
अर्थः मन, वचन एवं काया के अवलम्बन से आत्मा के प्रदेशों का सकंप होना योग है। वह आस्रव है।

आस्रव दो तरह का : (I) शुभ (II) अशुभ।

शुभः पुण्यस्याशुभः पापस्य। (तत्त्वार्थसूत्र 6.3)
अर्थः शुभ योग पुण्यकर्म के आस्रव का कारण है एवं अशुभ योग पापकर्म के आस्रव का कारण है।

अन्य तरह से आस्रव के दो प्रकार :

(I) सांपरायिक आस्रव (II) ईर्यापथ आस्रव।

सकषायाकषाययोः सांपरायिकेर्यापथयोः। (तत्त्वार्थसूत्र 6.4)

कषाय सहित जीव के सांपरायिक आस्रव (संसार बढ़ाने वाले बंध का कारण) एवं कषाय रहित जीव के ईर्यापथ आस्रव (बंध नहीं कराने वाला) होता है।

बंध तत्त्व

मिथ्यादर्शनाऽविरतिप्रमादकषाय योगा बंध हेतवः। (तत्त्वार्थसूत्र 8.1)

सकषायत्वाज्जीवः कर्मणो योग्यान्पुद्गलानादत्ते स बंधः।

(तत्त्वार्थसूत्र 8.2)

अर्थ :

सूत्र 8.2 के अनुसार जीव कषाय सहित होने पर कर्म के योग्य पुद्गलों को ग्रहण करता है या बांधता है।

सूत्र 8.1 के अनुसार बंध के पाँच कारण हैं :

(1) मिथ्यात्व (2) अव्रत (3) प्रमाद (आत्मा के प्रति असावधान) (4) कषाय एवं (5) योग।

संवर एवं निर्जरा

कैसे कर्म चक्र रूके? कैसे स्वतंत्रता प्राप्त हो? कौन कर सकता है?

आत्मा की स्वयं की जिम्मेदारी है। कोई बाहरी शक्ति, या कर्म–धूल को साफ करने का डिटर्जेण्ट इस जिम्मेदारी को वहन नहीं कर सकता है।

आस्रव निरोधः संवरः। स गुप्तिसमितिधर्मानुप्रेक्षापरीषहजय चारित्रैः।।

अर्थ : आस्रवों की रोक संवर है। यह गुप्ति, समिति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परिषहजय एवं चारित्र से होता है।

तीन गुप्तिः मन गुप्ति, वचन गुप्ति, काय गुप्ति (Controlled)

पांच समितिः ईर्या समिति (अनुशासित गमन), भाषा समिति, एषणा समिति (अनुशासित आहार), आदान निक्षेप समिति (सावधानीपूर्वक आदान प्रदान, रखना–उठाना), उत्सर्ग समिति (सावधानी पूर्वक मल–मूत्र का विसर्जन)

नोट :

13 प्रकार के चरित्र में पांच महाव्रत, पांच समिति, एवं 3 गुप्ति समाहित हैं।

12 अनुप्रेक्षा या बारह भावनाएं

Example

राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार।

मरना सबको एक दिन अपनी–अपनी वार।

दश धर्मों के नाम

क्षमा, मार्दव, आर्जव, शौच, सत्य, संयम, तप, त्याग, आकिंचन्य, ब्रह्मचर्य (तत्त्वार्थसूत्र 9.6)

तपसा निर्जरा च। (तत्त्वार्थसूत्र 9.1, 9.2, 9.3)

अर्थ : एवं तपस्या से निर्जरा होती है।

12 प्रकार के तप। 6 बहिरंग, 6 अंतरंग।

बहिरंग तपः अनशन, अवमौदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्त शय्यासन, कायक्लेश (तत्त्वार्थसूत्र 9.19)

अंतरंग तपः प्रायाश्चित, विनय, वैय्यावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग, ध्यान (तत्त्वार्थसूत्र 9.20)

आत्मिक विकास (सरल शब्दों में)

*शान्ति एवं सुख,

* अन्य से घ्रणा व ईर्ष्या का अभाव

* स्थायी सुख–शान्ति,

* मुक्ति–स्वतंत्रता: न तो दूसरे को नियंत्रित करना न दूसरे से नियंत्रित अनुभव करना।

आत्मिक सुख का मार्ग (सरल शब्दों में)

*अविनाशी आत्मा में ही ममत्व,

* अन्य को नियंत्रित करने एवं अपने आधीन करने की भावना न होना,

•अस्थायी अवस्थाओं को अस्थायी समझना, उन्हें स्थायी नहीं मान लेना।

आत्मिक सुख का मार्ग (पारिभाषिक शब्दों में)

सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्राणि मोक्षमार्गः। (तत्त्वार्थसूत्र 1.1)

अर्थः सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यग्चारित्र (मिलकर) मोक्षमार्ग हैं।

Bibliography: Same as for lecture 1

THANK YOU

For comments e-mail to :

parasagrawal@hotmail.com